पुस्तक समीक्षा

मैं सीखता हूँ बच्चों से जीवन की भाषा
शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण

पुस्तक – *मैं सीखता हूँ बच्चों से जीवन की भाषा*
लेखक – आलोक कुमार मिश्रा
प्रकाशक – बोधि प्रकाशन
प्रकाशन वर्ष – 2019
कुल पृष्ठ – 108
मूल्य – ₹ 120

© NCERT not to be republished

सुमित गंगवार*

दिल्ली के सरकारी विद्यालय में सामाजिक विज्ञान के अध्यापक आलोक कुमार मिश्रा की, 'मैं सीखता हूँ बच्चों से जीवन की भाषा' शिक्षा के विभिन्न आयामों को समेटते हुए विद्यालय जीवन के वास्तविक अनुभवों को काव्य रूप में ढली सत्तर कविताओं की एक काव्य मंजूषा है, जिसे बोधि प्रकाशन द्वारा वर्ष 2019 में प्रकाशित किया गया था। काव्य संग्रह में संकलित कविताओं के माध्यम से कवि ने शिक्षा, शिक्षा की प्रकृति, शिक्षा के उद्देश्य, ज्ञान निर्माण, विद्यालय, बच्चे की शिक्षा में स्थिति और बच्चे की नैसर्गिक प्रकृति पर विशेष ध्यान दिया है। यह पुस्तक एक स्कूली अध्यापक (कक्षा 6 से 10वीं के विद्यार्थियों को पढ़ाते हुए) के रूप में मिले अनुभवों और शैक्षिक समझ की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है। इसमें बच्चों और अध्यापकों के नज़रिए को व्यक्त करने के अलावा निर्माणवादी शिक्षणशास्त्र के व्यावहारिक पक्षों को भी उकेरने की कोशिश की गई है। इसे बहुत-से अध्यापकों और विद्यार्थियों ने पढ़कर पसंद किया है, जिसमें विद्यालय से लेकर महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर तक के लोग शामिल हैं। हालाँकि यह काव्य संग्रह मात्र केवल इन्हीं तक नहीं बंधा है। इन पहचानों से परे भी बहुत लोगों ने इसे पढ़ा और सराहा है। अभी भी लोग इस पर अपनी प्रतिक्रिया पहुँचाते रहते हैं। कविताओं में कवि ने विद्यार्थियों को सक्रिय व जीवंत इकाइयों के रूप में देखते हुए उनकी सशक्त हस्तक्षेपकारी भूमिका को दिखाया है। ज्ञान को अध्यापक और विद्यार्थियों की आपसी क्रिया द्वारा सृजित होता हुआ देखना कविताओं का केंद्र बिंदु है।

**असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, शिक्षा संकाय, तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 244001

वर्तमान शिक्षा की धुरी बच्चे हैं और संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था में बच्चे को केंद्र में रखा गया है। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि शिक्षा के केंद्र में बच्चे को रखते हुए शिक्षा से संबंधित सभी गतिविधियों में बच्चे को मुख्य स्थान दिया जाना चाहिए। 'इसमें मैं कहाँ हूँ' कविता में इसी बात पर ज़ोर दिया गया है कि यदि बच्चों के लिए निर्मित पुस्तकों और पाठ्यचर्या में बच्चों का स्थान गौण हो जाएगा तो वे सीखने के लिए तैयार नहीं हो पाएँगे। इस कविता को पढ़ते हुए मेरे मस्तिष्क में अपने शोध के दौरान की एक घटना कौंध गई। जब मैं अपने शोध पत्र से जुड़े आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए दिव्यांग विद्यार्थियों और विशिष्ट शिक्षा के अध्यापकों का साक्षात्कार कर रहा था तो माध्यमिक स्तर के दो विद्यार्थियों ने बताया कि, 'वे अपने पाठ्यक्रम में स्वयं को उपेक्षित महसूस करते हैं। पाठ्यक्रम में सम्मिलित एक भी चित्र तथा उदाहरण में दिव्यांग विद्यार्थियों का उल्लेख नहीं है।' यदि हम इसी तरह से हाशिए के लोगों की उपेक्षा करते रहेंगे तो निश्चित ही हम स्वामी विवेकानंद की मानव निर्मात्री शिक्षा दर्शन से बहुत पीछे छूट जाएँगे।

पाठ्यचर्या शिक्षा के उद्देश्यों को पूरा करने का एक सशक्त माध्यम है और शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य बच्चे के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना होता है। इस संदर्भ में कवि की कविता 'शिक्षा का जादू' महात्मा गांधी के 'सर्वोदय शिक्षा दर्शन' तथा अरबिंदो की 'सर्वांग शिक्षा दर्शन' का अनुसरण करती है। गांधीजी के सर्वोदय शिक्षा दर्शन की नींव ही इस बात पर टिकी है कि, 'शिक्षा को मनुष्य तथा बालक के शरीर, मन तथा आत्मा का सर्वांगीण विकास करना चाहिए।' जिससे बच्चे में सामाजिक तथा नैतिक गुणों का संतुलित और समन्वित विकास हो सके। इसी प्रकार अरबिंदो का मानना है कि "मानव भौतिक जीवन व्यतीत करते हुए तथा अन्य मानवों की सेवा करते हुए अपने मानस को 'अति मानस' (सुपरमाइंड) तथा स्वयं को 'अति मानव' (सुपरमैन) में परिवर्तित कर सकता है और यह कार्य शिक्षा द्वारा ही संभव है" (लाल और पलोड, 2017)। 'पाठ देश-प्रेम का' कविता सामाजिक तथा नैतिक गुणों की अनिवार्यता को स्वीकारते हुए तथा भारत के संविधान की प्रस्तावना में लिखी पंक्ति 'हम भारत के लोग' को आधार बनाते हुए बच्चों में भारतीय विविधता में एकता तथा विविधता का सम्मान जैसे सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों के विकास की बात करती है। इसके अतिरिक्त 'निरीह-लाचार मत बनना', तुम्हें सिरजनी है धरती' तथा 'मेरे समय के बच्चे' जैसी कविताएँ बच्चों को प्रतिकूल व्यवस्था या तंत्र के सामने घुटने टेकने की अपेक्षा उसकी बुराइयों से लड़ने का ज़ज्बा पैदा करती हैं।

जॉन डीवी का मानना है कि शिक्षा त्रिमुखी या त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है (सक्सेना और निगम, 2019)। जिसमें बच्चा, अध्यापक तथा पाठ्यचर्या नामक तीन ध्रुव हैं। बच्चा और अध्यापक पाठ्यचर्या पर कार्य करते हुए शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं और इस कार्य को निर्माणवादी ज्ञान मीमांसा द्वारा बखूबी स्पष्ट किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में निर्माणवाद के जनक पियाजे (1977) का मानना है कि, "बच्चा प्रत्येक प्रकार के नवीन ज्ञान का निर्माण, अपने जीवन के पूर्व अनुभवों तथा विश्वासों की नींव पर करता है और इस दौरान वह अपने समक्ष उपस्थित नई परिस्थितियों से अंतर्क्रिया करते हुए

© NCERT not to be republished

अपने मस्तिष्क में पहले से बने स्कीमा में परिवर्तन तथा समायोजन करता है अथवा नवीन स्कीमा का निर्माण करता है।" 'कक्षा में चाक', 'सृजन का पहिया', 'ज्ञान रचना', 'ज्ञान की गेंद', 'पढ़ाई का हिस्सा', मनचाहा परिवर्तन' और 'रचो अपना ज्ञान' जैसी कविताएँ ज्ञान निर्माण के निर्माणवादी सिद्धांत को और अधिक पुख्ता करने का काम करती हैं। ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में अध्यापक भी अपने विद्यार्थियों से अनवरत सीखता है। कवि कि 'मुझे रोक लेना बच्चों', मैं सीखता हूँ बच्चों से जीवन की भाषा' कविताएँ योकम तथा सिम्पसन के 'सीखना जीवनपर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है' नामक सिद्धांत की ओर इशारा करती हैं।

बच्चा और अध्यापक आपस में मिलकर ज्ञान का निर्माण करते हैं, लेकिन इस जटिल प्रक्रिया में सामाजिक अभिकरणों की महती भूमिका होती है। अतः इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता। इस मामले में कवि वायगोत्सकी, अलबर्ट बंडूरा तथा वाल्टर मिसकल के सामाजिक ज्ञान निर्माण की परंपरा को महत्व देते हुए 'समाज ज्ञान की उपज' के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। इन सभी मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बच्चा प्रत्येक प्रकार के ज्ञान का निर्माण सामाजिक परिस्थितियों में करता है (सिंह, 2018)। कवि की 'एकाकार दो दुनियाओं का', 'पढ़ना', 'अब वहां हरियाली है', 'जिस दिन', 'नए सूक्त, नए औज़ार', 'जीना और सीखना', 'पढ़ना क्या है', 'एक कक्षा में' जैसी कविताएँ ज्ञान की सामाजिक निर्मिति की बात को सही ठहराते हुए यह भी स्पष्ट करती हैं कि जब तक पुस्तकीय ज्ञान को वास्तविक जीवन से नहीं जोड़ा जाएगा तब तक इस ज्ञान की वैधता पर संदेह किया जाता रहेगा।

ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया में पाड़ बांधना (स्काफ़ोल्डिंग) संकल्पना को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जिसमें यह माना गया है कि अध्यापक, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में एक सुविधा प्रदाता की भूमिका का निर्वहन करते हुए बच्चों को स्वयं सीखने के अधिकाधिक अवसर प्रदान करे। इस संप्रत्यय को कवि की 'हट जाता हूँ दायरे से', 'इतना ही कर पाऊंगा', 'पूर्ण, सुंदर, लाजबाव' कविताएँ और अधिक पुष्ट करती हुई प्रतीत होती हैं। वास्तव में इन कविताओं के आधार पर 'समीपस्थ विकास का क्षेत्र' (ज़ेड.पी.डी.) की अवधारणा भी परिलक्षित होती है। 'समीपस्थ विकास का क्षेत्र' से तात्पर्य बच्चों के लिए एक ऐसे कठिन कार्यों के परास से है जिसे वह अकेले नहीं कर सकते लेकिन अन्य वयस्कों तथा कुशल सहयोगियों की मदद से उसे करना संभव होता है (सिंह, 2015)।

समीपस्थ विकास का क्षेत्र और पाड़ बांधने जैसी संकल्पना के मूल में ही बच्चे की वैयक्तिक स्वतंत्रता छुपी हुई है। इस संदर्भ में कवि की 'बस विकल्प दूंगा', 'मौका खुद को पढ़ने का', 'फिर मैं अध्यापक नहीं' जैसी कविताएँ शिक्षा में बच्चे की वैयक्तिक स्वतंत्रता की पक्षधर हैं। एक ओर बच्चे की वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा यशपाल समिति (1993) की रिपोर्ट 'शिक्षा बिना बोझ के' को 'इतना होमवर्क क्यों?' जैसी कविता सारगर्भित करती हैं। वहीं दूसरी ओर इस कविता में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा रूसो के प्रकृतिवादी शिक्षा दर्शन की भी झलक देखने को मिलती है।

औपचारिक शिक्षा का सबसे सशक्त माध्यम विद्यालय है। कोठारी आयोग (1964–66) ने कहा था कि 'भारत के भविष्य का निर्माण हमारी कक्षाओं

© NCERT not to be republished

में हो रहा है।' कवि की कविता 'एजेंडे में स्कूल' इसी बात की पुनर्पुष्टि करती है साथ ही 'बिना बच्चों के स्कूल' कविता पूर्व केंद्रीय शिक्षा मंत्री कालू लाल श्रीमाली के शिक्षा संबंधी विचारों को सारगर्भित करती है।

विद्यालय तथा उससे बाहर के शैक्षिक अनुभवों के द्वारा अध्यापक और बच्चों ने मिलकर शैक्षिक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है? इसकी जाँच के लिए ही शिक्षा ज्ञानानुशासन में आकलन तथा मूल्यांकन संप्रत्ययों का उदय हुआ। वर्तमान में मूल्यांकन केवल बच्चों के ज्ञान की सीमा को जानने तक सीमित नहीं है, अपितु इसके द्वारा अध्यापक को अपनी प्रगति का सही-सही अनुमान लगाने का अवसर भी मिलता है, जिससे उसे अपने वृत्तिक विकास में गुणवत्तापूर्ण वृद्धि करने में सहायता मिलती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए एवं कक्षाओं में अध्यापक की वास्तविक जबाबदेही तय करते हुए कवि 'मैं पूछता हूँ सवाल', 'बच्चे मेरा जीवन' जैसी कविताएँ गढ़ता है। यह मूल्यांकन वास्तव में पूर्व ज्ञान में परिमार्जन तथा ज्ञान के संवर्धन के लिए अनिवार्य है। ज्ञान का त्रिविमीय सिद्धांत कहता है कि किसी भी प्रतिज्ञप्ति को ज्ञान मानने की तीन शर्तें (सत्य, विश्वास तथा विश्वास का औचित्य साधन) हैं। सत्यता बदलने के साथ-साथ ज्ञान की प्रकृति में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक है। सत्य के इसी परिवर्तनशीलता के गुण को स्वीकारते हुए कवि 'यह परिणाम नहीं अंतिम' कविता रचता है जोकि प्रयोजनवाद के दो महत्वपूर्ण सिद्धांतों 'सत्य अभी निर्माण की अवस्था में है' तथा 'सत्य का निर्माण उसके फल से होता है' को और भी अधिक पुष्ट कर देती है।

चूँकि कवि एक सरकारी विद्यालय में सामाजिक विज्ञान विषय का अध्यापक है। इस दृष्टि से बच्चों के उचित सामाजिक विकास के प्रति उनका दायित्व और अधिक बढ़ जाता है। इस काव्य संग्रह की कुछ कविताएँ, जैसे— 'ऊबते बच्चे के सामने', 'अनंतता', 'अध्यापक', 'सीखना' कवि के अध्यापकीय जीवन की वास्तविकता को परावर्तित करती हैं। अध्यापक के निर्माणवादी मन की झलक वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था के सबसे सशक्त उदाहरण ऋषि वैली में उसके द्वारा गुज़ारे गए कुछ दिनों के अनुभवों के आधार पर सृजित 'ऋषि वैली स्कूल में' की तीन कविताओं के माध्यम से हो जाता है। 'अनिवार्य शर्त' और 'ऋषि वैली से लौटते हुए' कविताओं के माध्यम से कवि के वास्तविक अध्यापक रूप को समझा जा सकता है। इसके अतिरिक्त स्त्री शिक्षा के प्रति कवि की संवेदनशीलता 'अचंभित है कालचक्र' के माध्यम से महसूस की जा सकती है।

अंत में बस यही कहना चाहता हूँ कि शिक्षाशास्त्र में यह माना जाता है कि एक अध्यापक के शिक्षण की सफलता इस बात से सिद्ध होती है कि उसकी कक्षा की प्रथम पंक्ति से अंतिम पंक्ति में बैठे प्रत्येक बच्चे को उसका पढ़ाया हुआ समझ में आ जाए साथ ही प्रत्येक विद्यार्थी सीखे गए ज्ञान को आत्मसात कर ले। कविता के संदर्भ में भी इस नियम की समरूपता देखी जा सकती है कि कविता की भाषा और भाव हर आयुवर्ग के पाठक तक सही-सही पहुँच सके। इस दृष्टिकोण से आलोक कुमार मिश्रा अध्यापक और कवि दोनों रूप में अद्वितीय छाप छोड़ते हैं।

© NCERT not to be republished

संदर्भ

पाईगेट, जे. 1977. *द डेवलपमेंट ऑफ़ थॉट— एक्युलीबिरेशन ऑफ़ कॉग्निटिव स्ट्रक्चर्स*. विकिंग प्रेस, न्यूयार्क.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली.

शिक्षा मंत्रालय. 1966. *राष्ट्रीय शिक्षा आयोग की रिपोर्ट*. भारत सरकार, नयी दिल्ली.

लाल, आर. बी. और एस. पलोड. 2017. *शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय परिदृश्य*. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.

सक्सेना, एन. आर. एस. और एस. निगम. 2019. *शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार*. आर. लाल बुक डिपो, मेरठ.

सिंह, ए. के. 2015. *शिक्षा मनोविज्ञान*. भारती भवन पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली.

© NCERT not to be republished